Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 18, Issue No. 5, August-2021, ISSN 2230-7540

भारतीय पुलिस व्यवस्था एवं कानून

Dr. Ratan Singh Tomar*

Assistant Professor, Pt. Motilal Nehru P.G. Law College, Chhatarpur, Madhya Pradesh

सारांश – ***भारत की वर्तमान पुलिस व्यवस्था मूलतः ब्रिटिश पद्धति पर आधारित है यह व्यवस्था लगभग 160 वर्ष से भी पुरानी है लेकिन इसका आशय यह कदापि नही कि पूर्व भारत में केाई पुलिस व्यवस्था ही नही थी भारत के प्राचीन इतिहास में विशेषता हिन्दू शासन काल में देश में एक सुव्यवस्थित पुलिस बल कार्यरत होने का उल्लेख कही नही है। गुप्त काल मे भारत में एक सुव्यवस्थित एवं कुशल पुलिस प्रणाली लागू थी इसलिए गुप्त शासन काल में देश की कानून व्यवस्था सुद्रढ़ एवं संतोषप्रद थी। पुलिस बल के मुख्य अधिकारी को महादण्डाधिकारी कहा जाता था तथा उसके आधीनस्थ अधिकारियों को 'दण्डाधिकारी' कहा जाता था। सम्राट हर्षवर्धन के शासन काल में पुलिस अधिकारियों को 'संधिक' 'चोर्यधारिण' तथा दण्डपाशिक कहा जाता था जो क्रमशः जिले कस्वे और गांव की शांति व्यवस्था बनाये रखने के लिए उत्तरदायी होते थे।***

न्यायिक अधिकारी को 'मीमांसक' कहा जाता था। जिसका मुख्य कार्य पुलिस बल द्वारा बन्दी बनाये गये अपराधियों का दण्ड निधारण करना था, दाण्डिक प्रावधान प्रतिरोधक स्वरूप के होने के कारण लोग अपराध करने से डरते थे, इसलिए समाज में अपराध की संख्या नगण्य प्राय थी। पुलिस की एक शाखा खुफिया पुलिस का कार्य करती थी जिसे 'गुप्तचर विभाग' कहा जाता था।

----------X----------

विख्यात इतिहासकार वर्धचारियर के अनुसार, देशीय पुलिस व्यवस्था प्राचीन ग्रामीण समुदाय के सामूहिक उत्तरदायित्व पर आधारित थी जिन पर गांवों की शांति व्यवस्था का दायित्व होता था ग्राम का मुखिया अपने एक या अधिक विश्वस्त ग्राम-बंधुओं के साथ मिलकर सुरक्षा कर्मी की भूमिका निभाते थे गांव में आने जाने वाले आगन्तुकों पर निगाह रखते हुए उनके बारे में आवश्यक जानकारी एकत्र करते थे। इसी प्रकार संदेहास्पद व्यक्तियों पर भी उचित निगरानी रखी जाती थी। यदि गांव में किसी के घर में चोरी हो जाती थी तो ग्राम-प्रमुख का यह उत्तरदायित्व था कि वह चोर का पता लगाये तथा चोरी का पता लगाये तथा चोरी की संम्पत्ति वापिस हासिल करावाये परंतु यदि वह इसमें विफल रहता तो उसे अपने आर्थिक स्रोतों में से नुकसानी की यथा संभव पूर्ती करनी पड़ती थी यदि वह स्वयं इसकी पूर्ती करने का सार्मथ नही रखता था तो शेष राशि गांव के अन्य निवासियों से योगदान के रूप में वसूली जाती थी। कभी कभी कुख्यात लुटेरी जातियों से ग्राम की रक्षा करने हेतु ग्रामीणो को लुटेरों की मुखिया को कुछ धन भी देना पड़ता था ताकि वे गांव में प्रवेश न करें।

देश की शांति व्यवस्था बनाये रखने के लिए मुगल शासको ने भी एक सुसंगठित पुलिस व्यवस्था लागू की थी। परंतु यह पद्धति पूर्ववर्ती हिन्दू कालीन व्यवस्था से पूर्णतः भिन्न थी। पुलिस के मुख्य अधिकारी को फौजदार कहा जाता था। जिसके अधिनस्थ अधिकारियों को दरोगा या कोतवाल कहते थे। पुलिस बल के सबसे कनिष्ठ वर्ग के कर्मचारियों को सिपाही कहा जाता था गुप्तचर विभाग को खूफिया पुलिस कहा जाता था। जिसका कार्य अपराध और अपराधियों का पता लगाने तथा जांच पड़ताल करने में पुलिस बल की सहायता करना था। प्रांत के प्रमुख पुलिस प्राशासनिक अधिकारी को 'सूबेदार' या नाजिम कहा जाता था।

उल्लेखनीय है कि मुगल समाज के अंतिम वर्षो में बादशाह के सैनिक ने अपना वर्चस्व स्थापित कर पुलिस संस्था केा हाशिये पर डाल दिया परंतु मुगल शासन के पतन के साथ-साथ पुलिस व्यवस्था भी चरमरा गई और समाज में अत्याचार और अपराध की घटनाएं बढ़ने लगीं तथा जमीदारों द्वारा प्रजा का शोषण किया जाने लगा। शासन के उच्च अधिकारी भी भ्रष्टाचार से अछूते नही रहे। और इस प्रकार चारों तरफ आंतक और अराजकता का वातावरण निर्मित हुआ जो अन्तोगत्वा मुगल शासन के पतन का प्रमुख कारण बना।

भारत में ब्रिटिश शासन लागू होने के पश्चात कुछ वर्षो तक ब्रिटिश शासको ने मुगलों की पुलिस व्यवस्था को ही कुछ परिवर्तनों के साथ जारी रखा। सन् 1816 के विनिमय के

www.ignited.in

अनुसार गांव का मुखिया वहां की पुलिस का पदेन अधिकारी हेाता था। वह अपराधियो को पकड़ कर उन्हे जिले के पुलिस अधिकारी को सौंपता था। परंतु छोटे-मोटे मामले वह स्वयं निपटा लेता था। सन् 1860 के पुलिस में इसी व्यवस्था को थोड़े बहुत परिवर्तनों के साथ ग्रामों में भी लागू किये जाने की अनुशंसा की थी।

पुलिस प्रणाली

अपराधी जब पकड़ा जाता है तब उसका सामना सर्व प्रथम पुलिस से ही होता है। पुलिस के बाद उसका सामना न्यायालयों, परिवीक्षा-प्रणाली कारागार व वाक् विश्वास (पैरोल) जैसी प्रणालियों से होता है यह वैसा आवश्यक नही है कि अपराधी का इन सभी माध्यमों से हो। हर स्थिति में पुलिस ही वह माध्यम है जिसके संपर्क में सर्वप्रथम अपराधि को आना पड़ता है। अपराधी व निर्दोष दोनो ही प्रकार के व्यक्तियों के निमिन्त 'विधि' का तात्पर्य पुलिस से है तथा विधि के प्रति सम्मान-प्रदर्शन की भावना का उत्तरदायित्व राज्य के किसी भी अंग या अभिकर्ता से अधिक पुलिस पर है इस प्रकार विधि द्वारा अधिरोपित उत्तदायिक के संबंध में पुलिस राज्य के किसी भी इकाई के भ्रत्थ नही है बल्कि विधि और केवल विधि के भ्रत्य समझे जाते है।ऐसा आशय हाउस ऑफ लॉर्ड्स ने निर्णीत वाद

आर. बनाम मेट्रोपालिटन पुलिस कमिश्नर

इस बाद में धारित किया गया है, जिसके अनुरूप भावना की अभिव्यक्ति इलाहाबाद उच्च न्यायलय ने भी की

गौरधन कोआपरेटिव हाउसिंग सोसायटी लिमिटेड कलेक्टर एण्ड डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट मथुरा 3 के बाद में की है।

अटार्नी जनरल फार न्यू साउथ वेल्स

परपीच्युअल ट्रस्टी कम्पनी लिमिटेड - में भी ऐसा ही विचार व्यक्त किया गया है। इन वादो के निर्णयों के अनुसार पुलिस को अपना कार्य इस प्रकार करना चाहिए कि विधि व व्यवस्था का अनुपालन व नागरिकों के जीवन व सम्पत्ति की रक्षा होती रहे। यह पुलिस को निश्चित करना चाहिए कि अपराधी को पकड़ा जाए, अथवा नहीं, और इस निमिन्त वह किसी भी व्यक्ति का भृत्य न होकर मात्र विधि का भृत्य है। विधि का प्रवर्तन केवल पुलिस का ही कार्य है। 'पुलिस' शब्द का तात्पर्य राज्य के उस अभिकर्ता से है जिसका कार्य विधि व व्यवस्था का अनुपालन तथा दण्ड संहिता की विशिष्ट रूप से प्रवर्तन करना है।

अंग्रेजो के आने से पहले व अंग्रेजी शासन भारतवर्ष में स्थापित हो जाने के बहुत समय तक एक भी विधि व व्यवस्था के अनुपालन के रूप में अलग से किसी पुलिस शक्ति की स्थापना के निमिन्त किसी ने सोचा भी नहीं था। वास्तव में "ईस्ट इंडिया कम्पनी" के शासन काल में सन् 1774 में पहली बार हेस्टिंग्ज ने पुलिस सुधार के कार्यक्रमों का शुभारंभ किया सन् 1861 के पंचम अधिनियम (एक्ट ऑफ 1861) ने पुलिस स्थापना के स्वरूप व ढांचे सुधार के लिए आवश्यक उपलब्ध किया। यह अधिनियम पुलिस कमीशन की संस्तुतियों पर आधारित 21 सितम्बर 1860 को सर बार्टल फ्रेर द्वारा प्रस्तुत किए गए।

सन् 1860 में प्रस्थापित किए गए पुलिस कमीशन की मुख्य संस्तुतिया पुलिस संगठन, उसका प्रशासन व असकी कार्यप्रणालियों के संबंध में थी। सन् 1861 से लेकर अब तक राष्ट्र में, यद्यपि, अनेको परिवर्तन हुए जिसमें राष्ट्र का स्वतंन्त्र होना भी सम्मिलित है फिर भी आज पुलिस का प्रशासन सन् 1861 के अधिनियम में निर्दिष्ट नीतियों पर ही अधिकतर कार्य कर रहा है1।

पुलिस अधिनियम 1861

भारत में सन् 1857 की क्रांति (गदर) के परिणामस्वरूप ब्रिटिश शासन को प्रचलित पुलिस व्यवस्था में परिवर्तन करने की आवश्कता हुई क्योंकि पुलिस की ज्यादतियों के कारण जनता का रोष बढ़ गया था तथा पुलिस के प्रति उसका विश्वास पूर्णतः उठ गया था। अतः पुलिस अधिनियम 1861 पारित किया गया जिसके द्वारा पुलिस बल को पुनगठित किया गया। ताकि वह अपराधों के निवारण का कार्य प्रभावी ढंग से कर सके। अपराध और अपराधियों की जांच पड़ताल एवं पता लगाने के अलावा पुलिस को यातायात व्यवस्था, लोक-अपदूषण का निवारण, पशुओं को क्रूरता से बचाने, नशाखोरी, जनस्वस्थ्य संबंधी संकटो पर निगरानी रखने आदि के अतिरिक्त कार्य भी सौंपे गए।

ब्रिटिश सरकार ने पुलिस बल के कार्यों की समीक्षा करने तथा सुधार हेतु सुझाव देने के लिए सन् 1902 में पुलिस आयोग पुनः नियुक्त किया। इस आयोग ने प्रचलित पुलिस व्यवस्था की कार्य पद्धति से संतोष व्यक्त करते हुए यह अनुशंसा की कि ग्रामों के चौकीदारों की सहायता के बिना ग्रामीण अंचलों में अपराध निवारण की समस्या को हल करना कठिन है, अतः उनका सहयोग लेते रहना आवश्यक है। इस हेतु कोई अन्य वैकल्पिक व्यवस्था अपनायी जाना खर्चीला होगा।

सन 1860 के पुलिस आयोग ने पुलिस संगठन के लिए निम्न सिद्धांतों की संस्तुति की थी।

1. मिलिटरी पुलिस को समाप्त करके उसका कार्य सिविल आरक्षी वर्ग को सौंप दिया जाना चाहिए।

www.ignited.in

2. सिविल पुलिस का अपना पृथक प्रशासकीय प्रतिष्ठानन होना चाहिए, जिसका नेतृत्व हर प्रांत में एक पुलिस महानिरीक्षक किया करें।

3. पुलिस महानिरीक्षक प्रांतीय सरकार के प्रति उत्तरदायी होगा। जिस प्रकार पुलिस अधीक्षक जनपदीय कलेक्टर के प्रति उत्तरदायी होता है।

4. पुलिस अधीक्षक ग्रामीण पुलिस पर पर्यवेक्षण का कार्य करेंगें।

सन् 1902 ई. में लार्ड कर्जन ने भी एक नए पुलिस आयोग की नियुक्ति की थी, जिसने भ्रष्टाचार और अकार्यकुशलता के आधार पर पुलिस बल की आलोचना की थी, परंतु कोई मौलिक संस्तुति नहीं प्रदान की थी।

भारत की वर्तमान पुलिस व्यवस्था

संविधान में पुलिस को राज्य का विषय बनाया गया है, और केन्द्र को इस संदर्भ में अवशिष्ट शक्तियां प्राप्त है। केन्द्र अपनी अवशिष्ट शक्ति के अन्तर्गत सेन्ट्रल ब्यूरो ऑफ इनवेस्टीगेशन सेन्ट्रल रिजर्व पुलिस और केन्द्र द्वारा शासित क्षेत्रों के पुलिस बलों पर नियंत्रण का कार्य सम्पादित करता है। पुलिस को राज्य का विषय इसलिए बनाया गया है, ताकि लोकतांत्रित व्यवस्था में विधि प्रवर्तन, इकाइयां गहराई से उन क्षेत्रों में अपने को प्रविष्ट कर सके, जहां कि उन्हें कार्य करना है।

भारतीय व्यवस्था के अन्तर्गत पुलिस को सशस्त्र और शस्त्र विहीन पुलिस के रूप में विभाजित किया गया है। भारत की यह व्यवस्था संयुक्त राज्य अमेरिका और इंगलैण्ड से भिन्न है। संयुक्त राज्य अमेरिका में हर पुलिस वाला सशस्त्र होता है, जबकि इंग्लैण्ड में किसी भी पुलिस कर्मी को शस्त्र नही दिया जाता।

उल्लेखनीय है कि पुलिस अधिनियम 1861 एक व्यापक कानून था जिसके लगभग अर्ध भाग में लोक जमाव की स्थिति में पुलिस की शक्तियांे तथा विभिन्न विधिक परिभाषाओं का उल्लेख था। तथापि पुलिस बल को सेवा संगठन के रूप में नहीं दर्शाया गया था इसलिए अधिनियम में पुलिस बल में ढांचागत बदलाव संबंधी कोई प्रावधान नहीं था। यह अधिनियम केवल ब्रिटिश शासित प्रदेशो में ही लागू किया गया था। तथा तत्कालीन स्वतन्त्र रियासतें इसकी परिधि के बाहर थी क्योंकि वहां शासकों द्वारा अपनाई गई रियासत की पुलिस व्यवस्था कायम थी।

भारत की स्वतंत्रता के पश्चात ब्रिटिश कालीन उपनिवेशवादी पुलिस व्यवस्था देश की परिवर्तित परिस्थितियों के लिए उपयुक्त न होने के बावजूद आज भी कुछ थोड़े बहुत परिवर्तनों के साथ वही व्यवस्था लागू है जिसे बदला जाना नितान्त आवश्यक है सन् 1861 के पुलिस अधिनियम में अमूल संशोधन करके उसे बदले हुए भारतीय परिदृश्य के अनुकूल बचाऐ जाने की आवश्यकता है। इस दिशा में प्रयास भी किए जा रहे है तथा सोंली सोराबजी समिति ने नऐ पुलिस अधिनियम का प्रारूप तैयार करके उसे भारत सरकार के विचारार्थ प्रस्तुत कर दिया है इस प्रस्तावित नए पुलिस अधिनियम को संसद की मंजूरी मिलते ही उसे देश में लागू कर दिया जायेगा।

डी.एच बेले ने पुलिस अधिनियम 1861 के अन्तर्गत कार्य कर रही वर्तमान पुलिस व्यवस्था के निम्नलिखित तीन प्रमुख विशेषताओं को रेखांकित किया है।

1. भारतीय पुलिस सुसंगठित एवं सुनियोजित है तथा वह राज्यों के निर्देशानुसार कार्य करती है।

2. वह सेना बल की भांति विभिन्न दायरों में वर्गीकृत है।

3. प्रत्येक राज्य की पुलिस को दो शाखाओं में विभाजित किया गया है जिसे सशस्त्र पुलिस तथा निःशस्त्र पुलिस कहा जाता है।

वर्तमान भारत की प्रशासनिक व्यवस्था लोकतंत्र, समाजवाद एवं धर्म-निरपेक्ष कल्याणकारी राज्य के सिद्धांतो पर आधारित होने के बावजूद पुलिस की कार्य-पद्धति अर्ध-सैनिक कार्य प्रणाली पर आधारित है तथा वह अधिकारी डर धमकी तथा जोर-जबर्दस्ती से ही काम लेती है। दूसरे शब्दों में, पुलिस की कार्य पद्धति में लोक तांन्त्रिक प्रणाली की छाप कम दिखलाई पड़ती है, जबकि पुलिस से अधिक जन सहयोग की अपेक्षा की जाती है।[1]

भारत के संविधान में पुलिस को राज्य-सूची2 के अन्तर्गत रखा गया है। अतः राज्य में शान्ति व्यवस्था-कायम रखना तथा अपराधों की रोकथाम करने का दायित्व पूर्णतः राज्य पर होता है और राज्य यह कार्य पुलिस के माध्यम से करता है।

राज्य पुलिस की सहायतार्थ कुछ विशिष्ट प्रकार के पुलिस बल जो केन्द्र द्वारा प्रशासित होते है, कार्यरत है जिसमें सीमा सुरक्षा बल, रेलवे सुरक्षा बल, केन्द्रीय रिजर्व पुलिस, केन्द्रीय औद्योगिक सुरक्षा बल आदि प्रमुख है। होम गार्ड्स तथा विशेष सशस्त्र बल (एम.ए.एफ)को भी पुलिस संगठन का अंग माना गया है। उपयुक्त अतिरिक्त पुलिस-बलों के अलावा यातायात

पुलिस का एक प्रथक विभाग है जो सड़क पर वाहन यातायात तथा यातायात नियमों के उल्लंघन के प्रकरणों पर निगरानी रखता है। पुलिस के खुफिया

विभाग का कार्य गुप्त रूप से अपराध और अपराधियों का पता लगाने में सामान्य पुलिस की सहायता करता है।1 केन्द्रीय औद्योगिक सुरक्षा बल नाम की पुलिस-बल की एक नई शाखा 10 मार्च 1969 को स्थापित की गई जो सर्वप्रथम दर्गापुर इस्पात प्लांट से प्रारम्भ की गई और आज यह देश के प्रायः सभी सार्वजनिक प्रतिष्ठानों में कार्यरत है।

सामान्यतः पुलिस का कार्य अपने क्षेत्रों में गस्त देकर अपराध और अपराधियों का पता लगाना तथा उनके विरूद्ध अभियोजन चलाना व नागरिकों के हितों ही रक्षा के लिए शांति व्यवस्था बनाए रखना है परन्तु इसके अतिरिक्त उन पर बाल अपराधियों के देख-रेख तथा निगरानी का दायित्व भी है जिनके अकीम अधिनियम नशाबंदी कानून

खाद्य तथा पेय वस्तुओं में मिलावट संबंधी कानून, महिलाओं के विरूद्ध अपराधों से संबंन्धित कानून, आयुध अधिनियम, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम विस्फोटक पदार्थ संबंधी कानून, सीमा शुल्क या उत्पादन शुल्क विषयक कानून आदि के अन्तर्गत होने वाले-अपराधों का समावेश है।

निवेदित है कि भारत की स्वतंत्रता के पश्चात देश की राज्य से कल्याणकारी राज्य के रूप में अन्तरित हुआ जिसके परिणामस्वरूप पुलिस की भूमिका में भी अमूल परिवर्तन हुआ है। वर्तमान समय में जब भारत राजनीतिक, आर्थिक एवं सामाजिक अधुनीकीकरण की दिशा में अग्रसर है, लोगो की पुलिस से अपेक्षाए बढ़ती जा रही है क्योंकि पुलिस का कार्यक्षेत्र मुख्य रूप से जनता के सहयोग पर ही निर्भर करता है। अतः परिवर्तित परिवेश में पुलिस को अपने मूल्यांे, मान्यताओं एवं प्रवृत्ति में बदलाव लाना आवश्यक है ताकि वह जनता की अपेक्षाओं को साकार कर सके। पुलिस को सामाजिक परिवर्तन की क्रिया में सक्रिय भूमिका निभानी चाहिए ताकि जनसाधारण उससे कतराने के बजाए उसे अपना वास्तविक हितैषी मानकर उसे अपनी समस्याओं से अवगत कराते हुए उसके सहयोग की अपेक्षा कर सके। वास्तव में यह खेद का विषय है कि स्चतंत्रता के 6 दशको बाद भी पुलिस जनता में अपनी छवि सुधारने में सफल नही हो सकी है और आज भी लोग पुलिस के सम्पर्क में आने से कतराते है। यही कारण है कि अपराधों को घटित होते देखकर भी वे चक्षुदर्शी गवाह बनने को तैयार नही होते क्योंकि इन सबसे उन्हें वर्षों तक व्यर्थ में परेशानी उठानी पड़ सकती है। अतः यह नितांत आवश्यक है कि पुलिस को जनता से मित्रवत संबंध कायम करके आपराधिक न्याय प्रशासन को प्रभावी बनानें में सक्रिय भूमिका निभानी चाहिए।

सन्दर्भ-ग्रन्थ सूची

लेखक का नाम	पुस्तक का नाम	प्रकाशन का नाम
अवतार सिंह	भारतीय साक्ष्य अधिनियम	सैंन्टल लॉ पब्लिकेशन 2018
डॉ. ना. वि. पराजये	अपराध एवं दण्ड प्रशासन	सैंन्टल लॉ पब्लिकेशन 2020
अनुरूद्ध प्रताप	विधिशास्त्र के मूल सिंद्धात	सैंन्टल लॉ पब्लिकेशन 2015
राम आहूजा	सामाजिक समस्याएं	मार्डन लॉ पब्लिकेशन 2017
फरहत खान	विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग विचलन	अमर लॉ प्रकाशन 2014

Corresponding Author

Dr. Ratan Singh Tomar*

Assistant Professor, Pt. Motilal Nehru P.G. Law College, Chhatarpur, Madhya Pradesh

www.ignited.in